IOSR Journal Of Humanities And Social Science (IOSR-JHSS)
Volume 25, Issue 5, Series. 1 (May. 2020) 79-83
e-ISSN: 2279-0837, p-ISSN: 2279-0845.
www.iosrjournals.org

अमरकान्त की कहानियों की संवेदना

डॉ. चन्द्रशेखर रावल
ऐसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग,
सेठ पी.सी. बागला (पी.जी.) कॉलेज, हाथरस।

परम्परा की पुनरावृत्ति को परम्परा का विकास नहीं कहा जा सकता अपितु परम्परा का विकास करने वाला ही उस परम्परा का लेखक कहा जा सकता है और इस अर्थ में अमरकान्त प्रेमचन्द की परम्परा के कथाकार हैं। प्रेमचन्द ने 'पंचपरमेश्वर' से लेकर 'कफन' तक हिन्दी कहानी को एक दीर्घयात्रा सम्पन्न कराई है। प्रेमचन्द की पूर्ववर्ती कहानियों में आदर्शोन्मुख यथार्थवाद के स्वर सुनाई देते हैं, जो उत्तरोत्तर यथार्थोन्मुख आदर्शवाद में परिणत होते गये। प्रेमचन्द की परवर्ती कहानियों की संवेदना ने अमरकान्त की रचना–प्रक्रिया और संवेदना को प्रभावित किया है।

अमरकान्त की कहानियाँ प्रेमचन्द की कहानियों की तरह ज़िन्दगी की खरी और वास्तविक तस्वीर पेश करती हैं। अमरकान्त ने सपाटबयानी की उस पद्धति का उपयोग किया है जो प्रेमचन्द की परिपाटी का विकास कहा जा सकता है। प्रेमचन्द के बाद अमरकान्त के अतिरिक्त कोई दूसरा ऐसा कथाकार दिखाई नहीं पड़ता जो जीवन की वास्तविकता को इतने विश्वसनीय ढंग से पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करता हो। यहाँ पर यह ध्यान रखना आवश्यक है कि अमरकान्त ने अपनी कहानियों का सूत्र प्रेमचन्द , की अन्तिम कहानी 'कफन' से पकड़ा है, उनकी आरम्भिक कहानियों से नहीं। इस सन्दर्भ में डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी का कथन उद्धरणीय है कि– ''अमरकान्त 'कफ़न' की परम्परा के रचनाकार हैं। 'कफ़न' की परम्परा प्रगतिशील कहानीकार ही आगे बढ़ा सकते हैं। लेकिन प्रगतिशील कहानीकारों के पास भी वह द्वन्द्वात्मक दृष्टि नहीं है जो 'कफ़न' या 'ज़िन्दगी और जोंक' की रचना कर सके। अमरकान्त की अधिकांश कहानियों की तुलना, प्रेमचन्द की अधिकांश कहानियों से नहीं की जा सकती। अमरकान्त की कहानियाँ पूरे कहानीकार प्रेमचन्द की उद्धरणी नहीं प्रस्तुत करतीं। उन्होंने कहानी का सूत्र 'कफ़न' से पकड़ा है, प्रेमचन्द की अन्य या पूवर्तवर्ती कहानियों से नहीं।''[1] तात्पर्य यह है कि प्रेमचन्द की पूर्ववर्ती कहानियों से अमरकान्त की कहानियों की तुलना नहीं की जा सकती; क्योंकि प्रेमचन्द ने कहानी को जिस भूमि पर लाकर छोड़ा अमरकान्त ने वहीं से कहानी को उठाया।

अमरकान्त की कहानियों में निम्नवर्ग के शोषित पात्रों की चारित्रिक जटिलता पूर्णरूप से प्रकट होती है और इसका सूत्रपात प्रेमचन्द अपनी परवर्ती कहानियों में कर चुके थे। चारित्रिक जटिलता से तात्पर्य यह है कि कहानी के पात्र सीधे, सरल और सपाट नहीं होते अपितु उनका व्यवहार व मनोवृत्ति संश्लिष्ट होती है। चारित्रिक जटिलता से पात्रों की विश्वसनीयता व सजीवता सशक्त ढंग से स्थापित होती है, और यही कारण है कि अमरकान्त के निम्नवर्गीय. पात्र अधिक सजीव और वास्तविक लगते हैं। निर्धन व शोषित पात्र सिर्फ निरीह नहीं होगा, बल्कि अवसर मिलने पर वह यथाशक्ति चालाकी और काइयाँपन जरूर करेगा, जो कि उसके अस्तित्व की ही मांग है। अमरकान्त की कहानी 'ज़िन्दगी और जोंक' का रजुआ समाज द्वारा हर प्रकार से उपेक्षित और शोषित है। उससे लोग मनमाना काम लेकर अनुचित मजदूरी देते है, इतना ही नहीं उस पर चोरी का झूठा आरोप लगाकर उसे पीटते हैं। वह पगली को अपने साथ रखना चाहता है तब भी लोग उससे दुर्व्यवहार करते हैं। रजुआ की बुआ बनी हुई स्त्री भी, जिसके पास वह अपनी मेहनत की गाढ़ी कमाई जमा करता है, उसके दस रुपये मार लेती है। प्रकृति का प्रकोप भी उसी पर टूटता है और पहले उसे हैजा हो जाता है, फिर खुजली। इन सब भीषण स्थितियों से गुजरते हुए भी उसकी जीने की लालसा कम नहीं होती। पशुवत् जीवन जीते हुए भी वह मस्त है। इस अमानवीय व्यवस्था में वह इसी सूअरपन या गधेपन के सहारे ही जी सकता है। ''उसके हाथ में एक रोटी और थोड़ा सा अचार था और वह सूअर की भाँति चापुड़–चापुड़ खा रहा था। बीच–बीच में वह मुस्करा पड़ता, जैसे कोई बड़ी मंज़िल सर करके बैठा हो।''[2] समाज ने उसे अमानवीय जीवन जीने को मजबूर कर दिया है। यहाँ प्रेमचन्द और अमरकान्त की संवेदना का अन्तर देखा जा सकता है जो बदलते हुए समाज व मूल्यों का परिणाम है। 'कफ़न' के घीसू और माधव को कम से कम कफ़न की चिन्ता तो नहीं थी, किन्तु रजुआ के समाज में कफ़न मिलना भी दुष्कर है। अकर्मण्य घीसू और माधव चोरी करके अपना काम चला लेते थे लेकिन यह व्यवस्था तो रजुआ द्वारा चोरी न करने पर भी चोरी का झूठा आरोप लगाकर उससे दुर्व्यवहार करती है। यों 'कफ़न' एवं 'ज़िन्दगी और जोंक' कहानियाँ बदलते युगबोध, हमारे इतिहास की भीषण विसंगति, विरूपताओं और असफलताओं का चित्रण करती हैं।

लगभग यही स्थिति 'बहादुर' नामक कहानी के नौकर बहादुर की है। बहादुर भी वाचक के घर में नौकरी करने से पूर्व सामान्य बालकों की तरह उच्छृंखल और शरारती था। ''वह पहाड़ या जंगलों में निकल जाता और पेड़ों पर चढ़कर चिड़ियों के घोंसलों में हाथ डालकर उनके बच्चे पकड़ता या फल तोड़–तोड़कर खाता।''[3] वह घर के काम से जी चुराता था, जिसके कारण उसकी विधवा माँ उसे बहुत पीटती थी। अपनी माँ के इसी व्यवहार से खिन्न होकर वह घर से भाग आया, किन्तु उसे वाचक के घर में भी वही सब काम करने पड़े जिनके कारण वह अपनी माँ से पिटता था। ''सबेरे ही उठकर वह बाहर नीम के पेड़ से दातून तोड़ लाता था। वह हाथ का सहारा लिये बिना कुछ दूर तक तने पर दौड़ते हुए चढ़ जाता। मिनट भर में वह पेड़ की पुलई पर नजर आता। निर्मला छाती पीटकर कहती थी– अरे रीछ–बन्दर की जात, कहीं गिर गया तो बड़ा बुरा होगा। वह घर की सफाई करता, कमरों में पौंछा लगाता, अँगीठी जलाता, चाय बनाता और पिलाता। दोपहर में कपड़े धोता और बर्तन मलता।.... किसी को मामूली–से–मामूली काम करना होता तो बहादुर को आवाज़ देता। 'बहादुर, एक गिलास पानी।' 'बहादुर पेंसिल नीचे गिरी है', उठाना।' इसी तरह की फरमाइशें! बहादुर घर में फिरकी की तरह नाचता रहता।'[4] इसके बावजूद जरा सी भी गलती होने पर घर के किसी न किसी सदस्य से आये दिन मार खाता रहता। वह एक ऐसा असहाय व्यक्ति बन गया जो सब कुछ सहन करने के लिए विवश है। इस क्रूर और अमानवीय व्यवस्था में जन्तू की तरह ही बहादुर भी बेचारा और निरीह है।

आज की अमानवीय व्यवस्था में जहाँ गरीबों का शोषण होता है, वहीं नारी का दोहरा शोषण भी यह व्यवस्था करती है। नारी का शारीरिक और आर्थिक शोषण आज भी रुका नहीं है। हमने नारी के प्रति पुरातनवादी दृष्टिकोण पर भले ही बहुत प्रगतिशील ढंग से विचार–विमर्श किया हो अथवा हम अपने को नारी स्वतन्त्रता का पक्षधर कहते हों, किन्तु व्यवहार में हम आज भी नारी को वस्तु या सम्पत्ति से अधिक कुछ नहीं समझते हैं। अमरकान्त ने नारी के प्रति समाज के क्रूरतापूर्ण व्यवहार को उजागर करने के साथ–साथ उसे आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर बनने पर जोर दिया है। 'प्रियमेहमान' नामक कहानी की पात्र नीलम एक ऐसी स्त्री है, जिसकी माँ को उसके पति ने युवावस्था में ही छोड़ दिया था। बाद में पति के एक मित्र ने उन्हें कुछ दिन अपने घर में रखा और फिर मार–पीटकर निकाल भी दिया। ऐसी स्त्री को समाज हेय दृष्टि से ही नहीं देखता बल्कि उसकी सन्तान को भी बुरी नजरों से देखता है। चाहे उसमें स्त्री का कोई दोष हो या न हो। यह समाज उसी को आदर देता है जो आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न हों, भले ही वह कितने ही पतित और नीच क्यों न हों। अंग्रेजी से एम.ए. की हुई नीलम के पास ये दोनों चीजें नहीं हैं। इसलिए लोग उसका अधिक से अधिक शोषण करने को तत्पर रहते हैं और तरह–तरह के प्रलोभन देकर उसे फँसाना चाहते हैं। ''शादी और नौकरी के बारे में उसकी स्थिति लगभग समान थी। अचानक यह समाचार उड़ता कि फलाने से उसकी शादी होने वाली है, जो कुछ दिनों तक खूब गरम भी रहता और अन्त में धीरे–धीरे ठण्डा पड़ जाता। नौकरी उसको जितनी आसानी से मिलती उतनी ही आसानी से छूट भी जाती थी और वह इस तरह प्राइमरी से लेकर इण्टर कॉलेज तक ऐसे विद्यालयों में साठ–साठ रुपये तनख्वाह पर पढ़ा चुकी थी, जिनके व्यवस्थापक बड़े–बड़े विद्वान और मानवतावादी नेता थे। यह भी कहा जाता था कि महत्त्वाकाँक्षी लोग शादी का लालच देकर उसको अपने जाल में फँसा लेते हैं और अन्त में गन्ने की तरह चूसकर फेंक देते हैं और वह भी इस क्षेत्र की एक कुशल और अनुभवी खिलाड़ी बन गयी है।''[5] विभिन्न शैक्षणिक संस्थाओं के शीर्ष पदों पर विद्वान और समाजसेवी कहे जाने वाले लोग आसीन हैं, किन्तु वह नीलम का शारीरिक और आर्थिक उत्पीड़न करने से नहीं चूकते। इस दृष्टि से अमरकान्त की 'विजेता' एवं 'हत्यारे' नामक कहानियाँ भी महत्वपूर्ण हैं।

अमरकान्त की कहानियों का विषय मुख्यतः निम्न मध्यवर्ग के लोग हैं। अमरकान्त ने अपनी कहानियों में निम्न–मध्यवर्ग की यातनापूर्ण ज़िन्दगी का, उसकी विडम्बना का, और बेहतर होने की आशा में भाग–दौड़ का तथा समाज के प्रति उसके बढ़ते हुए अविश्वास और आक्रोश का जीवन्त चित्र प्रस्तुत किया है। वस्तुतः निम्न–मध्यवर्ग की संवेदना ही अमरकान्त की संवेदना है। नामवर सिंह के शब्दो में– "आज की कहानियों के पाठकों का जो बहुत बड़ा समूह तथाकथित निम्न–मध्यवर्ग के परिवारों में रहता है, उसकी ज़िन्दगी की तहों में भी खोजने को बहुत कुछ पड़ा हुआ है। कितने ही प्राइवेट मज़ाक होते हैं, हाथ और मुँह के बीच में भी बहुत–सी बातें पैदा होती रहती हैं। अमरकान्त ने अपनी कहानियाँ यहीं से उठाई हैं और इस तरह हमारी आँखों से हमारी ही ज़िन्दगी के जाने कितने पर्दे उठ गए हैं। इस क्षेत्र में अमरकान्त की कहानियाँ किसी भी नए लेखक के लिए चुनौती हैं।''[6]

जहाँ परिश्रम और फल का परस्पर कोई सम्बन्ध न हो ऐसी तर्कहीन व्यवस्था में व्यक्ति केवल श्रम पर भरोसा कैसे कर सकता है, वह केवल धर्म, पूजा–पाठ और जादू–टोनों में ही विश्वास कर सकता है। 'डिप्टी कलक्टरी' में शकलदीप बाबू अपने पुत्र नारायण के डिप्टी कलक्टरी की परीक्षा में सफल होने की बात को अपने पुत्र की योग्यता से अधिक ईश्वर या भाग्य पर विश्वास के आधार पर सोचते हैं। इसी तरह 'छिपकली' का रामजीलाल भी व्यवस्था का शिकार है। ईमानदारी से कठोर परिश्रम करने के बाद भी जब उसे कोई सफलता नहीं मिली तो उसका झुकाव आध्यात्म की ओर हो जाना अस्वाभाविक नहीं है– ''वह हर रविवार या छुट्टी के दिन किसी–न–किसी साधू–सन्यासी के दर्शन

करने भी जाता था और उसको निश्चित रूप से पता रहता था कि लकड़िया बाबा कहाँ रहते हैं, तुम्बड़िया बाबा का प्रवचन कब होगा और शहर में किस–किस व्यक्ति ने यक्षणियों को सिद्ध कर लिया है।''[7]

अमरकान्त की कहानियों के इस कोटि के सभी पात्रों के इस प्रकार के आचारण और विचारों के मूल में कहीं न कहीं तर्कहीन समाज जरूर है, जहाँ व्यवस्था के नाम पर विरूपताएँ हैं, असंगतियाँ हैं और है मूल्यहीनता। आज के व्यक्ति में वैज्ञानिक चेतना का अभाव है जिसके कारण वह अन्धविश्वासों, भाग्य, रूढ़ियों और कर्मफल में विश्वास करके, लगन और अपनी पूरी शक्ति से अपने जीवन को बदलने के बजाय अपनी स्थिति को नियति मानकर ही सन्तोष कर लेता है।

अधिकांशतः सम्पन्न वर्ग अथवा शोषक वर्ग के लिए मूल्य, आदर्श और सिद्धान्त जैसे शब्द कोई अर्थ नहीं रखते। आश्चर्य होता है कि मूल्य, सिद्धान्त, आदर्श की बड़ी–बड़ी बात करने वाले ये सम्पन्न लोग कितने गिरे हुए हैं। वस्तुतः वे आदर्शों और सिद्धान्तों का मुखौटा ओढ़े हुए ऐसे भेड़िये हैं जो समाज के नाम पर कलंक हैं। यही दोहरा व्यक्तित्व इस वर्ग की विशेष पहचान है। उनका आचरण उनके कथन के सर्वथा विपरीत होता है। 'कुहासा' नामक कहानी के बाबू साहब अपने बारे में कहते हैं– ''लो मेरे जैसा शरीफ आदमी इस शहर में ढूँढने पर भी नहीं मिलेगा। दूसरों को खिलाने–पिलाने ही में तो मैं बरबाद हो गया...।''[8] और इस खिलाने–पिलाने में उन्होंने दूबर नामक मजदूर का ऐसा शोषण किया कि वह अधमरा हो गया और भूखे–प्यासे दूबर को बचा–कुचा बासी खाना दे दिया– ''उन्होंने दूबर से सिर्फ पाँच घण्टे डटकर काम लिया जिसकी वजह से वह अधमरेपन की स्थिति पर पहुँच गया। बाबू साहब की इसलिए भी तारीफ करनी पड़ेगी कि काम खत्म होने पर उन्होंने दूबर के सामने पत्तल पर रात का बचा हुआ खाना परोसवा दिया, जिसमें लकड़ी की तरह कड़ी पूड़ियाँ–कचौड़ियाँ, कोहड़े की बासी महकती सब्जी, पुलाव की भुरकनी और ढेर सारी मीठी चटनी थी लेकिन दही–बड़े और बूदियाँ नादारद।''[9] वस्तुतः ऐसे मूल्यों, आदर्शों और सिद्धान्तों का धूर्ततापूर्ण उपयोग अपने स्वार्थ के लिए करने वाले लोग आज भी न जाने कितने मिल जायेंगे। अमरकान्त की अन्य कहानियों में ऐसे लोग बहुतायत में हैं। 'शक्तिशाली' का भोलाराम, 'आमंत्रण' के ठाकुर जयमंगल सिंह, 'जन्मकुण्डली' के शिवदास बाबू, 'छिपकली' के मालिक, 'लड़की की शादी' का वाचक, 'महान चेहरा' का अमूल्य और 'दुर्घटना' का राजेश इत्यादि इसी प्रकार के दोहरे चरित्र वाले व्यक्ति हैं।

स्वतन्त्रता के पश्चात् भारत में स्वाधीनता आन्दोलन के आदर्शों और सिद्धान्तों के अर्थ बदल गये। अब वे स्वार्थपरता के मुखौटे बन गये। अमरकान्त ने स्वतन्त्र भारत की इस विसंगति एवं विडम्बना को पहचाना और अपनी रचनाओं का विषय बनाया। स्वतन्त्र भारत की स्थिति मूलतः कथनी और करनी के अन्तर एवं उससे उत्पन्न मोहभंग की स्थिति है। स्वतन्त्र भारत में यह मोहभंग भारत के प्रत्येक सामान्यजन का हुआ। वस्तुतः अमरकान्त इसी मोहभंग के कथाकार हैं। 'बस्ती' नामक कहानी का आत्मानन्द बस्ती के तथाकथित नेताओं की बड़ी–बड़ी बातों में छला जाता है और अन्त में जब असलियत उसके सामने आती है तो उसका जबरदस्त मोहभंग होता है। ''आत्मानन्द निराशा की अनन्त गहराई में लुढ़कता गया। उसको अत्यधिक शर्म, अपमान और तुच्छता का अनुभव हो रहा था। उसके दिल के जैसे असंख्य टुकड़े कर दिये गये हों। क्या दुनिया ऐसी है? क्या विश्वास का यही फल मिलता है? कितना बेवकूफ उसे बनाया गया है। उसकी ज़िन्दगी का क्या महत्त्व है? उसने क्या पाया अभी तक? न उसे ख्याति ही मिली और न धन ही। उसने काम के पीछे अपने बाल–बच्चों पर ध्यान नहीं दिया। अपनी घर–गृहस्थी सुधारने की भी उसने कोशिश नहीं की।''[10] मोहभंग की दृष्टि से अमरकान्त की 'जनमार्गी', 'इण्टरव्यू', 'डिप्टी कलक्टरी' और 'छिपकली' इत्यादि कहानियाँ भी महत्त्वपूर्ण हैं।

आज की युवा पीढ़ी मानसिक रूप से इतनी कुंठित हो चुकी है कि उसका सम्पूर्ण व्यक्तित्व ही कुंठित और खण्डित दिखाई देता है। वे इस तर्कहीन व्यवस्था के विरुद्ध विद्रोह तो करना चाहते हैं किन्तु उसकी सही दिशा को वे नहीं जानते, इसलिए उनका विद्रोह खोखला है। युवा पीढ़ी की मानसिक विकृति वस्तुतः व्यवस्था की ही देन है, जिसने उनमें दायित्वहीनता की भावना भर दी है और इसी दायित्वहीनता के कारण मूल्यांधता अथवा मूल्य–निरपेक्षता का जन्म होता है। अमरकान्त की कहानी 'हत्यारे' इस मोहभंग से उत्पन्न विकृत और मूल्यांध मानसिकता के प्रतीक के रूप में हमारे समक्ष आती है। इस कहानी के हत्यारे केवल एक ही व्यक्ति के हत्यारे नहीं हैं, बल्कि सम्पूर्ण मानवीयता और जीवन–मूल्यों के हत्यारे हैं और उनको आश्रय देने वाली व्यवस्था भी उनसे अलग नहीं है। कहानी के हत्यारे आज की रुग्ण पीढ़ी के प्रतिनिधि हैं और हमारी वर्तमान व्यवस्था के ऊपर तीखी टिप्पणी भी हैं। मधुरेश ने 'अमरकान्त : एक पक्षधर लेखक की भूमिका' नामक अपने लेख में अमरकान्त के ही किसी मित्र के एक लम्बे पत्र को उद्धरित किया है जो 'हत्यारे' कहानी पर बड़ी स्पष्ट और बेबाक टिप्पणी है– ''उनके चरित्र की मूक रेखाओं में नये जमाने की सारी मर्दानगी, अचेतनता, दुर्गति और भावनाहीनता नियामक शक्तियाँ अन्तर्निहित हैं। उनके पुष्ट, सुगठित शरीर समाजवादी भावनाओं की राख से ढाली हुई मूर्तियों की तरह किसी अछोर अन्धकार के वैनाशिक प्रतीक बनकर हमारी सड़को पर अड्डा जमाये हुए हैं। ये हमारे उद्देश्यहीनता के उस गर्त से भी नीचे गिर चुके हैं जहाँ पर व्यक्ति अपने पारिवारिक स्वार्थों की पूर्ति के लिए कानून की गर्द उड़ाता है। यहाँ तक कि प्रलाप और कृत्य का अन्तर भी उनके लिए मिट गया है! बात की बात में वे

एडल्टरी से हत्या की छत तक पहुँच जाते हैं। लेकिन इस भय की एक शिकन भी उनके ललाट पर नहीं रेंगती। क्योंकि वे अपनी जीवन–चर्या के प्रति लोगों से पुलिस तक की भीतरी हमदर्दी के प्रति आश्वस्त हैं। हत्यारों की यह नई जाति बुराइयों की अनुभूति से ही अछूती है। अतः उसे सद्‌गुणों का अर्थ ही नहीं समझाया जा सकता। सामाजिक स्तर पर ये हत्यारे राजनैतिक हत्या प्रणाली के मात्र चिह्न हैं।''[11] 'हत्यारे' वस्तुतः आज की ऐसी युवा पीढ़ी की मानसिक कुंठा को रेखांकित करती है जिनके लिए बलात्कार जैसा कुकृत्य भी एक रचनात्मक कर्म है और गरीब मजदूर स्त्री के रुपये न देकर भागना बुद्धिमानी और साहस है। ये हत्यारे युवक पशु की तरह ही हिंसक हैं जो अपने से कमजोर पर वार करना जानते हैं।

ऐसी अमानवीय, मूल्यांध और तर्कहीन व्यवस्था को जंगली व्यवस्था मानना अनुचित नहीं। अमरकान्त के पात्र भी पशुओं जैसा जीवन व्यतीत करने को विवश हैं, वहीं दूसरी ओर अनेक पात्र पशुवत आचरण भी करते हैं। अमरकान्त की कहानियों में मनुष्यत्ता और पशुता का द्वन्द्व बना रहता है। इस सम्बन्ध में विश्वनाथ त्रिपाठी का कथन महत्वपूर्ण है जिसमें उन्होंने व्यवस्था के जंगल रूप के लिए तर्कहीनता और अकर्मण्यता को उत्तरदायी बताया है– ''समाज में यदि तर्कशील, मानवीय व्यवस्था होती तो सक्रियता, कर्मठता सार्थक होती है। लेकिन 'जंगल' में व्यक्तिगत कर्मठता का भरोसा मृगतृष्णा है। जंगल का यह केवल एक रूप है। इस जंगल की कुटिलता यह है कि वह कभी कभार कुछ लोगों को अच्छे अवसर प्रदान भी कर देता है! इससे जंगल के वासी पूरी तरह अपना मोह–भंग नहीं कर पाते। वे सक्रिय होते हैं, उछल–कूद करते हैं, एक दूसरे को काटते हैं (जंगल का मालिकवर्ग अलग अपना काम कर रहा होता है) हाँफते हैं, थकते हैं, निराश होते हैं, माथा ठोंक कर रह जाते हैं और भाग्य का खेल समझकर सो जाते हैं। अमरकान्त के पात्रों का बार–बार पशु–पक्षियों जैसा आचरण करना इस मानव–जंगल के कारण है। उनकी मानवता उनके जंगल से टकराती है। किसी क्रान्तिकारी परिवर्तन के अभाव में प्रायः जंगल ही जीतता है। अमरकान्त के पात्र स्थितियों से निराश होकर अन्त में ऐसे ख़ामोश और पस्त हो जाते हैं जैसे पशु–पक्षी कटघरे या पिंजरे में से बाहर निकलने की अपार छटपटाहट के बाद असफल होकर सो जाएँ।''[12]

अमरकान्त के रचनाकर्म में कहीं भी अश्लीलता नहीं आने पायी है, जिससे उनके कुशल रचनाकार होने का संकेत मिलता है। आपत्तिजनक प्रसंगों के आने पर उनका चित्रण वे संकेतों के द्वारा करके आगे बढ़ जाते हैं। अमरकान्त की कहानी 'दोपहर का भोजन' की चर्चा करते हुए यशपाल ने कहा है– ''इस तरह की ठंडी, घटनाहीन कहानी लिख सकने के लिए बहुत बड़ी ताकत की जरूरत होती है। क्योंकि ताकत के आते ही संयम टूटने लगता है। अमरकान्त के अधिकाँश पात्र सीधे विद्रोह न करते हुए भी उसकी बेचौनी और परिवर्तन की इच्छा आपके भीतर पैदा कर देते हैं, यही उनकी विलक्षणता है।''[13] कहना न होगा कि यह बड़ी ताकत अमरकान्त के यहाँ स्पष्टतः परिलक्षित होती है। इस दृष्टि से अमरकान्त की 'असमर्थ हिलता हाथ', 'हत्यारे', 'पलाश के फूल' 'जिन्दगी और जोंक' 'लड़का–लड़की', 'मूस' 'मछुआ' 'म्यान की दो तलवारें', 'जोकर' एवं 'विजेता' इत्यादि कहानियाँ महत्वपूर्ण हैं।

अमरकान्त की कहानियों में मनोविज्ञान की समझ सर्वत्र दिखाई देती है। उनकी कहानियों में पात्रों की सोच, उनकी मानसिकता, उनका व्यवहार और उनकी स्थिति सभी में पूर्ण सामंजस्य दिखाई पड़ता है और इसी अर्थ में अमरकान्त की कहानियाँ मनोवैज्ञानिक हैं। मार्कण्डेय ने लिखा है– ''वर्ग–चरित्रों और उनके मनोवैज्ञानिक समझ के क्षेत्र में अमरकान्त की गहरी रुचि है।''[14] अमरकान्त ने मुख्यतः आर्थिक रूप से विपन्न, बुजुर्ग, क्लर्क अथवा बेरोज़गार युवक आदि की समस्याओं को कहानी का विषय बनाया है। 'इण्टरव्यू' और 'दोपहर का भोजन' जैसी अनेक कहानियाँ इसका उदाहरण हैं, जिसमें उन्होंने निम्न–मध्यवर्गीय लोगों की मनःस्थिति का अद्‌भुत किन्तु यथार्थ अंकन किया है। यहाँ राजेन्द्र यादव का कथन महत्त्वपूर्ण है कि– "अमरकान्त टुच्चे, दुष्ट और कमीने लोगों के मनोविज्ञान का मास्टर है। उनकी तर्कपद्धति, मानसिकता और व्यवहार को जितनी गहराई से अमरकान्त जानता है, मेरे ख़याल से हिन्दी का कोई दूसरा लेखक नहीं जानता।''[15] अमरकान्त अपने पात्रों की मनोदशाओं का चित्रण अपनी ओर से नहीं करते बल्कि पात्रों की चेष्टाओं के माध्यम से ही स्थिति–विशेष में उनकी मनःस्थिति और उनका मानसिक द्वन्द्व पूरी तरह से प्रकट कर देते हैं।

अमरकान्त की कहानियों की एक विशेषता यह है कि वे किसी घटना या स्थिति का पाठक के मन में चित्र उपस्थित कर देते हैं। यह अमरकान्त की अपने समय और सन्दर्भो की पकड़ एवं स्वयं को पात्रों या स्थितियों के साथ एकाकार कर देने का ही परिणाम है। मधुरेश ने अमरकान्त की कहानियों का विश्लेषण करते हुए सत्य ही लिखा है– "अमरकान्त की कहानियों का रचना–संसार अपने आस–पास जीवन्त परिवेश से निर्मित है और जीवन का वैविध्य, उसकी ताज़गी और अनगढ़ता ही उनकी कहानियों का सबसे बड़ा आकर्षण भी है। यही कारण है कि अपने समय–संदर्भों की जैसी पहचान अमरकान्त में दिखाई देती है वह उनके किसी भी दूसरे समकालीन कहानीकार के यहाँ विरल है। अमरकान्त की कहानियों को पढ़कर पिछले दो दशकों के देश की स्थिति का जायजा आसानी से मिल सकता है जबकि उनके समकालीन दूसरे बहुत से कहानीकार इस दृष्टि से बेहद निराश करते हैं।''[16]

अमरकान्त ने अपनी कहानियों में प्रतीकों, बिम्बों और संकेतों का ऐसा प्रयोग किया है कि पूरी कहानी ही सिनेमा की रील की तरह पाठक के समक्ष घूम जाती है। इस दृष्टि से अमरकान्त की 'मौत का नगर', 'सप्ताहान्त', 'रामू की बहन', 'सपूत', 'बीच की जमीन', 'दोपहर का भोजन', 'ज़िन्दगी और जोंक', 'लड़की की शादी', 'स्वामी', 'टिटहरी', 'सहधर्मिणी', 'पोखरा', 'कम्युनिस्ट' एवं 'सहयात्री' इत्यादि कहानियाँ महत्त्वपूर्ण हैं।

आज हमारे सामाजिक और राजनीतिक जीवन में भ्रष्टाचार और कथनी–करनी का अन्तर इतनी तेजी से बढ़ता जा रहा है कि कोई संवेदनशील या प्रगतिशील रचनाकार उसकी उपेक्षा नहीं कर सकता। ऐसी विषम स्थिति के यथार्थ चित्रण का व्यंग्य ही एक सशक्त माध्यम हो सकता है। रचनाकार जब समाज के वैषम्य और अन्तर्विरोधों का चित्रण करता है तो व्यवस्था के खोखलेपन के प्रति अपना आकोश व्यंग्य के माध्यम से ही प्रकट करता है। सामाजिक विसंगतियों, व्यवस्थागत अन्तर्विरोधों और हर प्रकार के ढोंगों का व्यंग्य के माध्यम से निर्मम अंकन निश्चित ही रचनाकार की उस मानसिकता को दर्शाता है जो बेहतर सामाजिक व्यवस्था की आकाँक्षा लिए होती है। अमरकान्त की लगभग सभी कहानियों में व्यवस्था के प्रति आक्रोश और व्यंग्य की उपस्थिति सहज ही परिलक्षित की जा सकती है। मधुरेश के शब्दों में– ''वह अपनी कहानियों से सामाजिक बुराई की इस हिंसात्मकता और उग्रता का ही रचनात्मक विरोध करना चाहते हैं। यही कारण है कि व्यंग्य का जितना प्रचुर और जैसा कलात्मक उपयोग उनके यहाँ मिलता है, उतना और वैसा शायद उनके सब समकालीन कहानीकारों के यहाँ मिलाकर भी नहीं मिलता।... अमरकान्त की कहानियों में बहुधा ही व्यंग्य की एक प्रच्छन्न अन्तर्धारा प्रवाहित रहती है जो पूरी व्यवस्था को ही छूती और छीलती चलती है।''[17]

अमरकान्त की 'कलाप्रेमी' 'बस्ती', 'मैत्री', 'छिपकली' 'देश के लोग' 'घर', 'इण्टरव्यू' 'काली छाया', 'फर्क', 'लडकी की शादी', 'जन्मकुण्डली' और 'दुर्घटना' इत्यादि कहानियाँ व्यंग्य की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। वस्तुतः अमरकान्त की अचूक व्यंग्य प्रतिभा उनके कथा–साहित्य में सर्वत्र दिखायी देती है। अमरकान्त की व्यंग्य प्रतिभा पर मधुरेश का यह विश्लेषण निश्चित ही महत्वपूर्ण है कि– ''अमरकान्त व्यंग्य का बहुत रचनात्मक और सक्षम उपयोग करते हैं– समाज की बनावट की गहरी पहचान के अभाव में ऐसा कोई उपयोग संभव ही नहीं हो सकता था।... अपनी बहुत सी कहानियों में अमरकान्त आदमी की क्षुद्रता और स्वार्थ को उद्घाटित करते हैं, लेकिन ऐसा करते हुए वे कहीं भी उस सिनीसिज़्म के शिकार नहीं होते जो मानवीय विवेक और विकास की संभावनाओं पर से विश्वास उठ जाने से पैदा होता है। वे प्रायः समानान्तर प्रवृत्तियों के अंकन के लिए दो परस्परविरोधी चरित्रों के माध्यम से क्षुद्रता की प्रवृत्ति पर व्यंग्य करते हैं, तो कभी उसे ढाँक रखने की चतुराई और छद्म पर।''[18]

संदर्भ :

1. वर्ष–1 : अमरकान्त, पृष्ठ संख्या–121
2. अमरकान्त की सम्पूर्ण कहानियाँ खण्ड–1, पृष्ठ संख्या–58
3. वही, पृष्ठ संख्या–241
4. वही, पृष्ठ संख्या–242, 243, 244
5. वही, खण्ड–2, पृष्ठ संख्या–59
6. कहानी : नई कहानी, पृष्ठ संख्या–38–39
7. अमरकान्त की सम्पूर्ण कहानियाँ, खण्ड–1, पृष्ठ संख्या–200
8. वही, पृष्ठ संख्या–152
9. वही, पृष्ठ संख्या–152
10. वही, पृष्ठ संख्या–25
11. वर्ष–1 : अमरकान्त, पृष्ठ संख्या–160
12. वही, पृष्ठ संख्या–128
13. वही, पृष्ठ संख्या–265
14. वही, पृष्ठ संख्या–201
15. वही, पृष्ठ संख्या–190
16. वही, पृष्ठ संख्या–157
17. वही, पृष्ठ संख्या–159–160
18. हिन्दी कहानी का विकास, पृष्ठ संख्या–171